

धर्ममाकर्ण्य जैनेन्द्रं सुरेन्द्राद्यैः समर्चितम्। ज्ञात्वा स्वल्पतरं स्वायुर्मुनिर्जातो विचक्षणः ॥१५॥
 पूर्वकर्मोदयाद्भिक्षामप्राप्तो धीरमानसः। उग्रोऽग्रं सुतपः कुर्वन्विहरंश्च महीतले ॥१६॥
 सौरीपुरीं समागत्य यमुनापूर्वसत्तटे। आतापनाख्ययोगेन संस्थितो मुनिनायकः ॥१७॥
 तदा पापवर्द्धिकां गत्वा यमुनाचक्रं भूभुजा। पुनर्व्याघुटितेनैव पापिनाशकुनास्थया ॥१८॥
 स्वबाणैः पूरितः साधु-स्तदासौ धन्यनामभाक्। शुक्लध्यानप्रभावेन सिद्धिं प्राप्नोति निरंजनः ॥१९॥
 अहो धीरत्वमत्युच्चैः सतां केनात्र वर्ण्यते। येनो घोरोपसर्गेऽपि शीघ्रं मुक्तिः समाप्यते ॥२०॥
 धन्यो धन्यमुनीश्वरो भयहरो भव्यात्मनां तारको देवेन्द्रादिसमर्चितो हितकरः श्रीमुक्तिकान्तावरः।
 आधिव्याधिसमस्तदोषनिकरं हत्वा सुखं शाश्वतं कुर्यान्मे वरबोधसिन्धुरतुलश्चारित्रचूडामणिः ॥२१॥

इति कथाकोशे धन्यमुनेराख्यानं समाप्तम्।

७२. पञ्चशतमुनीनामाख्यानम्।

पादपद्मद्वयं नत्वा जिनेन्द्रस्य शुभश्रिये। मुनिपञ्चशतानां तु चरित्रं श्रेयसे ब्रूवे ॥१॥
 दक्षिणाख्यपथे ख्याते देशे च भरताभिधे। कुम्भकारकटे पूर्वं पत्तने सुचिरंतने ॥२॥
 राजाभूद्वण्डको राज्ञी सुव्रता रूपमण्डिता। बालकाख्योभवन्मन्त्री पापी धर्मपराङ्मुखः ॥३॥

से विहार कर वह तपस्या करता तथा धर्मोपदेश देता हुआ शौरीपुर आकर यमुना के किनारे आतापन योग द्वारा ध्यान करने लगा। इसी ओर यहाँ का राजा शिकार के लिए आया हुआ था, पर आज उसे शिकार न मिला। वह वापस अपने महल की ओर आ रहा था कि इसी समय इसकी नजर मुनि पर पड़ी। इसने समझ लिया कि बस, शिकार न मिलने का कारण इस नंगे का दीख पड़ना है, उसने यह अपशकुन किया है। यह धारणा कर इस पापी राजा ने मुनि को बाणों से खूब वेध दिया। मुनि ने तब शुक्लध्यान की शक्ति से कर्मों का नाश कर सिद्ध गति प्राप्त की। सच है, महापुरुषों की धीरता बड़ी ही चकित करने वाली होती है। जिससे महान् कष्ट के समय में भी मोक्ष प्राप्ति हो जाता है ॥१२-२०॥

वे धन्य मुनि रोग, शोक, चिन्ता आदि दोषों को नष्ट कर मुझे शाश्वत, कभी नाश न होने वाला सुख दें, जो भव्यजनों का भय मिटाने वाले हैं, संसार समुद्र से पार करने वाले हैं, देवों द्वारा पूजा किए जाते हैं, मोक्ष-महिला के स्वामी हैं, ज्ञान का समुद्र हैं और चारित्र-चूडामणि हैं ॥२१॥

७२. पाँच सौ मुनियों की कथा

जिनेन्द्र भगवान् के चरणों को नमस्कार कर पाँच सौ मुनियों पर एक साथ बीतने वाली घटना का हाल लिखा जाता है, जो कि कल्याण का कारण है ॥१॥

भरत के दक्षिण की ओर बसे हुए कुम्भकारकट नाम के पुराने शहर के राजा का नाम दण्डक और उनकी रानी का नाम सुव्रता था। सुव्रता रूपवती और विदुषी थी। राजमन्त्री का नाम बालक था। यह पापी जैनधर्म से बड़ा द्वेष रखा करता था। एक दिन इस शहर में पाँच सौ मुनियों का संघ

तत्रैकदा पुरे पञ्चशतोत्कृष्टमुनीश्वराः। नाम्नाभिनन्दनाद्यास्ते समायाताश्च लीलया ॥४॥
 खण्डकाख्यमुनीन्द्रेण स मंत्री बालकः कुधीः। स्याद्वादवाग्भरैर्वादे निर्जितो धर्मवर्जितः ॥५॥
 ततस्तेन प्ररुष्टेन भंडको मुनिरूपभाक्। मंत्रिणा बालकेनोच्चैः प्रेषितः सुव्रतान्तिके ॥६॥
 तथा सार्द्धं ततश्चेष्टां स कुर्वन्पापमण्डितः। राज्ञः संदर्शितः पश्चात्पश्यतां भो महामते ॥७॥
 एतेषां भक्तियुक्तस्त्वं मन्येहं तव कामिनीम्। दातुं समिच्छसि व्यक्तं किं करोत्येष ते मुनिः ॥८॥
 इत्याकर्ण्य ततो राजा दण्डको मूढमानसः। यंत्रे संपीडयामास मुनीन्द्रान्दुष्टकोपतः ॥९॥
 दुष्टात्मा दुर्गतेर्गामी जन्तुर्मिथ्यात्वमोहितः। किं पापं कुरुते नैव जन्मकोटिप्रकष्टदम् ॥१०॥
 तदा ते मुनयो धीरा जैनतत्त्वविदाम्बराः। शुक्लध्यानप्रभावेन सिद्धिं प्रापुर्जगद्धिताम् ॥११॥

आया। बालक मंत्री को अपनी पंडिताई पर बड़ा अभिमान था। सो वह शास्त्रार्थ करने को मुनिसंघ के आचार्य के पास जा रहा था। रास्ते में इसे एक खण्डक नाम के मुनि मिल गए। सो उन्हीं से आप झगड़ा करने को बैठ गया और लगा अन्त-सन्त बकने। तब मुनि ने उसकी युक्तियों का अच्छी तरह खण्डन कर स्याद्वाद-सिद्धान्त का इस शैली से प्रतिपादन किया कि बालक मंत्री का मुँह बन्द हो गया, उनके सामने फिर उससे कुछ बोलते न बना। तब उसे लज्जित हो घर लौट आना पड़ा। इस अपमान की आग उसके हृदय में खूब धधकी। उसने तब इसका बदला चुकाने की ठानी। इसके लिए उसने यह युक्ति की कि एक भाँड को छल से मुनि बनाकर सुव्रता रानी के महल में भेजा। यह भाँड रानी के पास जाकर उससे भला-बुरा हँसी-मजाक करने लगा। इधर उसने यह सब लीला राजा को भी बतला दी और कहा-महाराज, आप इन लोगों की इतनी भक्ति करते हैं, सदा इनकी सेवा में लगे रहते हैं, तो क्या यह सब इसी दिन के लिए है? जरा आँखें खोलकर देखिए कि सामने क्या हो रहा है? उस भाँड की लीला देखकर मूर्खराज दण्डक के क्रोध का कुछ पार न रहा। क्रोध से अन्धे होकर उसने उसी समय हुक्म दिया कि जितने मुनि इस समय मेरे शहर में मौजूद हों, उन सबको घानी में पेल दो। पापी मंत्री तो इसी पर मुँह धोये बैठा था। सो राजाज्ञा होते ही उसने पलभर का भी विलम्ब करना उचित न समझ मुनियों के पेले जाने की सब व्यवस्था फौरन जुटा दी। देखते-देखते वे सब मुनि घानी में पेल दिये गए। बदला लेकर बालक मंत्री की आत्मा सन्तुष्ट हुई। सच है-जो पापी होते हैं, जिन्हें दुर्गतियों में दुःख भोगना है, वे मिथ्यात्वी लोग भयंकर पाप करने में जरा भी नहीं हिचकते। चाहे फिर उस पाप के फल से उन्हें जन्म-जन्म में क्यों न कष्ट सहना पड़े। जो हो, मुनिसंघ पर इस समय बड़ा ही घोर और दुःसह उपद्रव हुआ। पर वे साहसी धन्य हैं, जिन्होंने जबान से चूँ तक न निकाल कर सब कुछ बड़े साहस के साथ सह लिया। जीवन की इस अन्तिम कसौटी पर वे खूब तेजस्वी उतरे। उन मुनियों ने शुक्लध्यानरूपी अपनी महान् आत्मशक्ति से कर्मों का, जो कि आत्मा के पक्के दुश्मन हैं, नाश कर मोक्ष लाभ किया ॥२-११॥

चञ्चत्सुवर्णगिरिराजसुनिश्चलास्ते प्रध्वस्तकर्ममलसंगतयो मुनीन्द्राः।
देवेन्द्रदानवनरेन्द्रसमर्चनीया नित्यं भवन्तु भवशान्तिविधायिनो मे ॥१२॥
इति कथाकोशे पञ्चशतमुनीनामाख्यानं समाप्तम्।

७३. चाणक्याख्यानम्

नत्वा नमत्सुराधीशैः समर्चितपदद्वयम्। श्रीजिनेन्द्रं प्रवक्ष्यामि चाणक्यस्य कथानकम् ॥१॥
पुरे पाटलिपुत्राख्ये नन्दो राजा बभूव च। मंत्रिणोस्य त्रयः काविः सुबन्धुः शकटालवाक् ॥२॥
पुरोधा कपिलस्तस्य देविला प्राणवल्लभा। तयोश्चाणक्यनामाभूत्युत्रो वेदविचक्षणः ॥३॥
एकदा काविमन्त्री च नन्दं प्राह महीपते। प्रत्यन्तवासिनो भूपाः समायातास्तवोपरि ॥४॥
राजा जगाद भो मन्त्रिन्द्रव्यं दत्त्वा मदोद्धतान्। शत्रून्निवारय प्रौढां-स्तच्छ्रुत्वा तेन मन्त्रिणा ॥५॥
द्रव्यं दत्त्वा यथायोग्यं शत्रवस्ते निवारिताः। विना मन्त्रिजनैर्नैव राज्ञो राज्यस्थितिर्भवेत् ॥६॥
पृष्टे राज्ञैकदा भाण्डा-गारिको धनहेतवे। स च प्राह प्रभो सर्वं शत्रूणां काविराददौ ॥७॥
ततो रुष्टेन नन्देन स काविः सकुटुम्बकः। अन्धकूपे विनिक्षिप्तः संकटद्वारके तथा ॥८॥

दिपते हुए सुमेरु के समान स्थिर, कर्मरूपी मैल को, जो कि आत्मा को मलिन करने वाला हैं, नाश करने वाले और देवों, विद्याधरों, चक्रवर्तियों, राजाओं और महाराजाओं द्वारा पूजा किए गए जिन मुनिराजों ने संसार का नाश कर मोक्ष लाभ किया वे मेरा भी संसार-भ्रमण मिटावें ॥१२॥

७३. चाणक्य की कथा

देवों द्वारा पूजा किए जाने वाले जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर चाणक्य की कथा लिखी जाती है ॥१॥

पाटलिपुत्र या पटना के राजा नन्द के तीन मंत्री थे। कावी, सुबन्धु और शकटाल ये उनके नाम थे। यहीं एक कपिल नाम का पुरोहित रहता था। कपिल की स्त्री का नाम देविला था। चाणक्य इन्हीं का पुत्र था। यह बड़ा बुद्धिमान् और वेदों का ज्ञाता था ॥२-३॥

एक बार आस-पास छोटे-मोटे राजाओं ने मिलकर पटना पर चढ़ाई कर दी। कावी मंत्री ने इस चढ़ाई का हाल नन्द से कहा। नन्द ने घबरा कर मंत्री से कह दिया कि जाओ जैसे बने उन अभिमानियों को समझा-बुझाकर वापस लौटा दो। धन देना पड़े तो वह भी दो। राजाज्ञा पा मंत्री ने उन्हें धन वगैरह देकर लौटा दिया। सच है, बिना मंत्री के राज्य स्थिर हो ही नहीं सकता ॥४-६॥

एक दिन नन्द को स्वयं कुछ धन की जरूरत पड़ी। उसने खजांची से खजाने में कितना धन मौजूद है, इसके लिए पूछा। खजांची ने कहा-महाराज, धन तो सब मंत्री महाशय ने दुश्मनों को दे डाला। खजाने में तो अब नाम मात्र के लिए थोड़ा-बहुत धन बचा होगा। यद्यपि दुश्मनों को धन स्वयं राजा ने दिलवाया था और इसलिए गलती उसी की थी, पर उस समय अपनी यह भूल उसे न दीख